शरद कुमार त्यागी

बनाम

उत्तरप्रदेश राज्य व अन्य,

18 जनवरी, 1989

[मुरारी मोहन दत्त तथा एस. नटराजन, जे.जे.]

राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2), 7(2) एवं 11 --आम की गुंडागर्दी के बदले चौथ की मांग--पर भुगतान करने से इंकार-ठेकेदारों को धमकी देना और दुकानदार--पुलिस में रिपोर्ट दर्ज--चाहे भड़के- इसका असर 'कानून और व्यवस्था' या 'जनता के रखरखाव' पर पड़ता है आदेश'--निरोध आदेश-क्या वैध है। सलाहकार बोर्ड - मित्र द्वारा प्रतिनिधित्व - बंदी का कर्तव्य अनुरोध करने के लिए.हिरासत आदेश--को चुनौती---विलंब के आधार पर बंदी की गिरफ़्तारी- उक्त आदेश की वैधता।

सलाहकार बोर्ड- मित्र द्वारा प्रतिनिधित्व- बंदी का कर्तव्य अनुरोध करने के लिए।

हिरासत आदेश--को चुनौती-विलंब के आधार पर बंदी की गिरफ़्तारी-क्या चलने योग्य है।

दिनांक 5 अप्रैल, 1988 को रिट याचिका राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम अन्तर्गत धारा 3(2) के तहत में याचिकाकर्ता के खिलाफ नज़रबंदी का

आदेश पारित किया गया। इससे उनकी सेवा नहीं हो सकी आदेश दिया गया और उसे एहतियातन हिरासत में ले लिया गया क्योंकि वह फरार था- आईएनजी. उसके साथ भगोड़ा व्यवहार किया गया और उसका सहारा लिया गया। अधिनियम की धारा 7(2) उनके विरुद्ध उद्घोषणा प्राप्त की गई। आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 82 और 83 के तहत और 5 मई, 1988 को उसे फाँसी दे दी गई। उसके बाद उसने आत्मसमर्पण करने पर उसे दिनांक 4 जुलाई 1988 को न्यायालय में पेश किया गया और जिला जेल भेज दिया गया। जहां उसे हिरासत में भेजने का आदेश दिया गया और उसके आधार पर दिनांक 5 जुलाई 1988 को हिरासत में लिया गया। अभियुक्त की हिरासत को तीन घटनाओपर आधारित किया गया, जिनके द्वारा यह संकेत किया गया

कि याचिकाकर्ता के द्वारा ऐसा कोई कृत्य किया गया जो सार्वजनिक कानून एवं व्यवस्था बनाये रखने के विरूद्ध था। उक्त घटनाएँ निम्न थीं:

(1) 8 जुलाई 1987 को याचिकाकर्ता उसके सहयोगियों के साथ गया था तथा उन्होंने एक आम के बाग के ठेकेदार को धमकाया कि गुंडागर्दी (चौथ) की फीस देनी होगी तथा उसके साथ मारपीट की। जिस पर पुलिस को धारा 301 तथा 323 भादंसं में मामले की रिपोर्ट दर्ज करायी गयी।

(2) 11 फरवरी 1988 को याचिकाकर्ता ने दुकानदार को धमकी दी कि उसे तुरन्त 10,000/रू देने होंगे अन्य उसे जान से मार दिया जायेगा।

दुकानदार ने मामले की रिपोर्ट पुलिस को दी, जिस पर पुलिस के द्वारा धारा 506 भादंस के तहत मामला दर्ज कर लिया गया।

(3) 3 मार्च 1988 को याचिकाकर्ता उसके हाथ में रिवॉल्वर लेकर बाज़ार क्षेत्र में चला गया और, दुकानदार को धमकी दी कि यदि उन्होंने 'चौथ' नहीं दिया तो वे उनकी दुकान नहीं खोल सकते। उक्त धमकी पर पूरा बाजार बंद हो गया। याचिकाकर्ता को हिरासत के कारणों की भी जानकारी दी गई जिससे कि मामले को धारा 10 के तहत सलाहकार बोर्ड को प्रस्तुत किया जायेगा तथा वह अधिनियम की धारा 3 के तहत अपना प्रतिनिधित्व बोर्ड के समक्ष विचारार्थ हेतु प्रस्तुत कर सकता है।

दिनांक 2 अगस्त, 1988 को सलाहकार बोर्ड की बैठक तय की गयी थी। बोर्ड ने याचिकाकर्ता की लिखित और मौखिक प्रतिनिधित्व पर विचार किया और एक रिपोर्ट दी कि याचिकाकर्ता को हिरासत में लेने हेतु पर्याप्त कारण मौजूद हैं। राज्य सरकार ने सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और 17/18 अगस्त, 1988 को याचिकाकर्ता की हिरासत की पुष्टि का आदेश पारित किया।

इस न्यायालय में रिट याचिका के माध्यम से याचिककर्ता के हिरासत आदेश निम्नलिखित आधारों पर चुनौती दी गयी:

(1) हिरासत के आधारों में जो निर्धारित तीन आधार दर्शाये गये हैं उनमें ऐसी कोई घटना नहीं है जो सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव को या

समुदाय के जीवन की समगति को प्रभावित करेगी। (2) निरोध आदेश को विश्वसनीयता देने के लिए तीसरी घटना गढ़ी गई है। (3) याचिकाकर्ता जब सलाहकार बोर्ड के समक्ष उपस्थित हुआ था तब उसे किसी मित्र की सहायता पाने के अवसर से इन्कार कर दिया गया और (4) जब राज्य सरकार ने अधिनियम की धारा 3(5) के तहत एक रिर्पोट केन्द्र सरकार को भेजी तब केन्द्र सरकार ने याचिकाकर्ता के मामले पर विचार नहीं किया तथा केंद्र सरकार द्वारा उक्त रिपोर्ट पर मंथन नहीं करने से याचिकाकर्ता की हिरासत दूषित हो जाती है।

रिट याचिका को खारिज करते हुए यह अभिमत जाहिर किया है कि-

अभिनिर्धरित : 1.(ए) ठेकेदार से जो चौथ की मांग की गयी थी तथा उस पर किया गया हमला यह दर्शित करता है कि वह किसी विशेष ठेकेदार से चौथ की मांग को लेकर नहीं था, बल्कि उस इलाके के आम के पेड के मालिक या ठेकेदार से अपेक्षित था। ऐसी परिस्थितियों में जो मांग की गयी थी तथा जो हमला कारित किया गया था उससे निस्संदेह उस क्षेत्र में आम के पेड़ों के मालिक और ठेकेदार के मन में भय और घबराहट पैदा होगी तथा, और सभी समुदाय की सम गति प्रभावित होगी। [265 ई-एफ]

1. (बी) दूसरे चरण में भी जो घटना कारित हुयी है, उसे उसी तरीके से देखा गया, जिस तरह पहली घटना को देखा गया है तथा जैसा प्रथम चरण में बताया गया है उसे वैसा ही माना जाएगा। ऐसा नहीं है कि अशाक

कुमार से की गयी मांग और उसके बाद की धमकी को पृथक से किया गया हो। दूसरी ओर, दुकानदारों से जो भी पैसों की मांग की गयी थी तथा दुकानदारों को धमकी दी गई थी वह सभी से पैसे ऐंठने की योजना के तहत की गयी थी, जिससे कि यदि उनके द्वारा चौथ राशि अदा नहीं की गयी तो उनका कारोबार और उनकी जान भी खतरे में पड़ जाएगी। इस मांग से उस इलाके के दुकानदारों को भी भय व्याप्त हो गयी है कि उनके द्वारा याचिकाकर्ता को भुगतान करने के लिए बाध्य किया जाएगा अन्यथा उन्हें अपनी दुकानें चलाने की अनुमति नहीं दी जाएगी। [265 जी-एच; 266 ए-बी].

1. (सी) जहां तक तीसरे चरण की घटना का सवाल है तो उसमें यह दर्शाया गया है कि, याचिकाकर्ता ने एक रिवॉल्वर ले रखी है तथा बाजार के सभी दुकानदारों को धमकाया, कि यदि उनके द्वारा 'चौथ' अदा नहीं किया गया तो उन्हें उनकी दुकान खोलने की अनुमति नहीं दी जाएगी तथा अन्य परिणाम का सामना करना पड़ेगा। इस घटना मात्र से यह नहीं माना जा सकता है कि कानून और व्यवस्था की स्थिति में गड़बड़ी हो रही है परन्तु मात्र बाज़ार में जीवन की समगति को प्रभावित करने वाला माना जा सकता है। [266 बी-डी]

1. (डी) क्या कोई अधिनियम जो कानून और व्यवस्था या सार्वजनिक व्यवस्था से संबंधित है वह समुदाय का जीवन पर अधिनियम

के प्रभाव पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में, अधिनियम की पहुंच और प्रभाव समुदाय के जीवन की कार्य की क्षमता सम गति को बाधित करती है या अव्यवस्थित कर देती है तो यह एक ऐसा अधिनियम होगा जो सार्वजनिक व्यवस्था को प्रभावित करें। [266 ई, जी]

हस्तगत मामले में यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता द्वारा, जैसा कि तीन चरणों में बताया गया है, ठेकेदारों और दुकानदारों से जो मांगी की गयी है इसका असर मात्र कानून को प्रभावित करने की सीमा तक ही सीमित हो तथा सार्वजनिक व्यवस्था का रखरखाव प्रभावित नहीं हो। [267 ई]

डॉ *राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य, [1966] 1 एससीआर 709; अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 3 एससीआर 288; नागेन्द्र नाथ मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1972] 1 एससीसी 498; नंदियाल राॅय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1972] 2 एससीसी 524 संदर्भित और गुलाब मेहरा बनाम यूपी राज्य, [1987] IV एससीसी 302, प्रतिष्ठित।*

2. इस तर्क को स्वीकार करना संभव नहीं है कि हिरासत के आधार में जो तीसरी घटना उल्लेखित की गयी है वह मनगढ़ंत तथ्यों पर आधारित है। रिकॉर्ड के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि एचसी खजान सिंह ने तुरंत पुलिस में घटना की सूचना दी थी तथा इंस्पेक्टर आरसी वर्मा

के द्वारा उसकी रिपोर्ट की सत्यता की जाँच की गई थी। [267 एच; 268 ए]

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कमल किशोर सैनी, एआईआर 1988 एससी 208 213 का उल्लेख है।

3. हालांकि सलाहकार बोर्ड ने बंदी को एक मित्र के साथ उपस्थित होने की अनुमति दे दी थी, परन्तु बंदी इसमे विफल रहा था. उसने सलाहकार बोर्ड में ऐसा कोई प्रतिनिधित्व नहीं किया कि उसके पास किसी मित्र की सेवाएं प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय नहीं था तथा एक मित्र का और उसकी सेवाएँ प्राप्त करने के लिए समय की आवश्यकता थी। इस परिस्थिति में, वह स्वयं की गलतियों का लाभ नहीं उठा सकता तथा उसकी हिरासत के आदेश को इस तथ्य के साथ चुनौती नहीं दे सकता कि उसे सलाहकार बोर्ड की बैठक में किसी मित्र से सहायता प्राप्त करने का अवसर नहीं दिया गया। साथ ही उसने सलाहकार बोर्ड के समक्ष ऐसा भी कोई प्रतिनिधित्व पेश नहीं किया कि उसे किसी मित्र की सेवा सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता हो। [271 सी-डी; 272 बी]

4.(ए) केंद्र सरकार ने वास्तव में धारा 3(5) के तहत राज्य सरकार द्वारा भेजी गई रिपोर्ट अधिनियम, और हिरासत आदेश पर विचार किया था तथा धारा 14 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उक्त आदेश को रद्द करने का कोई औचित्य नहीं पाया। [272 डी]

4.(बी) याचिकाकर्ता फरार था और सीआरपीसी की धारा 82 और 83

के तहत उद्घोषणा की गई थी तथा इसके बाद याचिकाकर्ता ने खुद को कोर्ट में समर्पित किया था। गिरफतारी में हुए देरी के आधार पर उसके हिरासत आदेश को चुनौती दी गयी थी। यह ऐसा मामला नहीं है जहां याचिकाकर्ता खुलेआम घूम रहा था लेकिन कोई गिरफ्तारी नहीं हुई क्योंकि उसके बड़े पैमाने पर सार्वजनिक व्यवस्था का रखरखाव पर कोई खतरा नहीं माना जाता था। [272 एफ]

आपराधिक मूल क्षेत्राधिकार: रिट याचिका (सीआरएल) संख्या 359, 1988।

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत)

याचिकाकर्ता के लिए आरके जैन, आरके खन्ना और एएस पुंडीर।

उत्तरदाताओं के लिए योगेश्वर प्रसाद, श्रीमती रचना गुप्ता, श्रीमती रचना जोशी, दलवीर भंडारी, सुश्री सीके सुचरिता और सुश्री ए सुभाषिनी।

न्यायालय का फैसला नटराजन, जे. के द्वारा सुनाया गया।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत याचिकाकर्ता द्वारा यह याचिका, धारा 3(2) राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, (इसके बाद 'अधिनियम') के तहत उसके खिलाफ उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा पारित हिरासत के आदेश को रद्द करने तथा उसे हिरासत से मुक्त करने के लिए उचित रिट जारी करने की मांग के लिए दायर की गई है। दिनांक 5 अप्रैल, 1988 को याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिनियम की धारा 3(2) के तहत हिरासत का आदेश पारित

किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता के फरार होने से उसकी हिरासत के आदेश की पालना नहीं की जा सकी और उसे निवारक हिरासत में नहीं लिया जा सका। परिणामस्वरूप उसे मफरूर घोषित किया गया और अधिनियम की धारा 7(2) का सहारा लिया जाकर दिनांक 4 मई, 1988 को आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 82 और 83 के तहत उसके खिलाफ उद्घोषणा प्राप्त की गई और उक्त आदेश 4 मई, 1988 को निष्पादित किया गया। इसके बाद याचिकाकर्ता ने 4 जुलाई, 1988 को अदालत में आत्मसमर्पण कर दिया तथा दिनांक 5 जुलाई, 1988 को उसे हिरासत आदेश और हिरासत के आधार पर मेरठ की जिला जेल भेज दिया गया।

हिरासत के आधार में याचिकाकर्ता की हिरासत के लिए तीन आधार निर्धारित किए गए थे और वे निम्न प्रकार हैं:

1. दिनांक 08.07.1987 को रात्रि लगभग 9.30 बजे कस्बा सरधना, थाना सरधना (मेरठ) में आप अपने अन्य साथियों के साथ लाला ओम प्रकाश जैन के बाग में गये जो यूसुफ पुत्र इस्माइल के कब्जे में अनुबंध पर है। आपने वहां उपस्थित युसूफ आदि से कहा कि वे लोग आम की गुंडागर्दी की (चौथ) फीस नहीं देते इसलिए आपने अभद्र भाषा का प्रयोग करते हुए कहा कि "सालेे को मार डालो", ताकि वह हमेशा के लिए गायब हो जायें और आप लोगों ने एक इरादे से यूसुफ आदि को जान से मारने की नियत से उनके साथ मारपीट की। यूसुफ की सूचना पर आपके विरुद्ध

अपराध संख्या 211 धारा 307, 323 आईपीसी के तहत मुकदमा दर्ज किया गया है, जो न्यायालय में विचाराधीन है। आपके उक्त कुकर्म से सरधना में आतंक व जिला मेरठ में आतंकवाद फैल गया है और इस प्रकार आपने ऐसा कृत्य किया है जो सार्वजनिक कानून व्यवस्था बनाए रखने के विरुद्ध है।

2. दिनांक 11.02.1988 को दिन में लगभग 11 बजे कस्बा व थाना सरधना में बिनौली रोड पर आप अपने साथी विनय कुमार के साथ श्री अशोक कुमार की दुकान पर गये और आपने श्री अशोक कुमार को धमकी दी कि कल या परसों तक उसने 10,000 (दस हजार) रूपए आपको अदा नहीं किये तो उसे जान से मार दिया जायेगा। अशोक कुमार की सूचना के आधार पर अपराध क्रमांक 48 धारा 506 आईपीसी के तहत कायम किया गया है जो विचाराधीन है। आपके उपरोक्त अशोभनीय आतंक के कारण कस्बा सरधना तथा जनपद मेरठ में आतंकवाद व्याप्त हो गया है और इस प्रकार आपने ऐसा आचरण किया है जो सार्वजनिक कानून एवं व्यवस्था की स्थिति बनाये रखने के विरूद्ध है।

3. दिनांक 03.03.1988 को कस्बा सरधना, थाना सरधना, जिला मेरठ में आपने सरधना के बाजार में हाथ में रिवाल्वर लेकर दुकानदारों से कहा कि जो कोई चौथ नहीं देगा, वह बाजार में दुकान नहीं खोल सकेगा, जिसके कारण बाजार में दुकानें बंद रहीं। एचसी खजान सिंह ने अन्य

कर्मचारियों की मदद से जब आपको गिरफ्तार करने का प्रयास किया तो आप हवाई फायरिंग करते हुए अपने साथी के साथ मोटर साइकिल पर भाग गये। इस आशय की जानकारी एचसी द्वारा डायरी में लिखवाई गई है। खजान सिंह द्वारा थाना जीडी क्रमांक 14 पर प्रातः 10-10 घंटे की जांच विवेचना निरीक्षक श्री आर.सी.वर्मा द्वारा की गई है तथा जांच करने पर उपरोक्त घटनाक्रम सही पाया गया तथा इस आशय की प्रविष्टि जीडी संख्या 33 पर की गई है। आपकी उपरोक्त अशोभनीय गतिविधि से सरधना और जिला मेरठ में आतंकवाद व्याप्त हो गया है और इस तरह आपने ऐसा कार्य किया है जो सार्वजनिक कानून और व्यवस्था की स्थिति बनाए रखने के प्रावधानों के खिलाफ है।

हिरासत के आधार भी निम्नलिखित निर्धारित करते हैं:

(1) याचिकाकर्ता यदि चाहे तो अधिनियम की धारा 8 के तहत यथाशीघ्र जेल अधीक्षक के माध्यम से गृह सचिव, गृह मंत्रालय, राज्य सरकार को अभ्यावेदन दे सकता है;

(2) कि याचिकाकर्ता की हिरासत से संबंधित कागजात अधिनियम की धारा 10 के तहत हिरासत की तारीख से तीन सप्ताह के भीतर सलाहकार बोर्ड को प्रस्तुत किए जाएंगे और यदि प्रतिनिधित्व देर से प्राप्त होता है तो सलाहकार बोर्ड द्वारा उस पर विचार नहीं किया जाएगा;

(3) कि यदि याचिकाकर्ता चाहे तो वह अधीक्षक के माध्यम से

सचिव, भारत सरकार, गृह मंत्रालय (आंतरिक सुरक्षा विभाग), नॉर्थ ब्लॉक, नई दिल्ली को संबोधित करके भारत सरकार को भी अभ्यावेदन दे सकता है।

(4) यदि धारा 11(1) के प्रावधानों के तहत याचिकाकर्ता सलाहकार बोर्ड द्वारा व्यक्तिगत सुनवाई की इच्छा रखता है तो उसे अपने प्रतिनिधित्व में इसका विशेष रूप से उल्लेख करना चाहिए या उसे जेल अधीक्षक के माध्यम से राज्य सरकार को इसकी सूचना देनी चाहिए।

यह सामान्य आधार है कि याचिकाकर्ता ने अपनी नजरबंदी के खिलाफ सरकार को अभ्यावेदन दिया और इसलिए आदेश पारित किया गया। उसमें उन्होंने कहा था कि वह सलाहकार बोर्ड की बैठक के समय अपनी ओर से प्रतिनिधित्व करने के लिए एक मित्र की सेवाएं लेना चाहते हैं। यह अभ्यावेदन दिनांक 15 जुलाई, 1988 को जिला मजिस्ट्रेट, मेरठ को प्राप्त हुआ था। एसएसपी, मेरठ की टिप्पणियों की प्राप्ति के बाद, जिला मजिस्ट्रेट की टिप्पणियों के साथ अभ्यावेदन दिनांक 21 जुलाई, 1988 को राज्य सरकार को भेजा गया था। इसके लिए अभ्यावेदन की प्रतियां दिनांक 19 जुलाई, 1988 को राज्य सरकार और सलाहकार बोर्ड को भेज दी गईं। अभ्यावेदन पर राज्य सरकार ने दिनांक 28 जुलाई, 1988 को विचार किया और खारिज कर दिया और याचिकाकर्ता को जेल अधीक्षक, मेरठ के माध्यम से सूचित किया गया।

याचिकाकर्ता के मामले पर विचार करने के लिए सलाहकार बोर्ड की बैठक 2 अगस्त, 1988 को तय की गई थी और राज्य सरकार द्वारा जिला मजिस्ट्रेट और अधीक्षक जिला जेल, मेरठ को बैठक की तारीख सूचित करने के लिए एक रेडियोग्राम भेजा गया था। सलाहकार बोर्ड के. रेडियो-ग्राम आगे इस प्रकार निर्धारित है:

> "बोर्ड आगे निर्देश देता है कि जिला मजिस्ट्रेट या पुलिस अधीक्षक को सुनवाई की तारीख पर सभी प्रासंगिक रिकॉर्ड के साथ बोर्ड के समक्ष उपस्थित होना होगा और बंदी के अनुरोध पर उसके सबसे अच्छे दोस्त (गैर-वकील) को भी उसके साथ उपस्थित होने की अनुमति दी जा सकती है। " रेडियो-ग्राम की एक प्रति जेल अधीक्षक को भेजी गई और इसे याचिकाकर्ता को दिखाया गया और उसकी स्वीकृति प्राप्त की गई। सलाहकार बोर्ड ने याचिकाकर्ता के लिखित और मौखिक अभ्यावेदन पर विचार किया और रिपोर्ट दी कि याचिकाकर्ता की हिरासत के लिए पर्याप्त कारण थे। राज्य सरकार ने सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और याचिकाकर्ता की हिरासत की पुष्टि करते हुए 17/18 अगस्त, 1988 को एक और आदेश पारित किया। इसके बाद याचिकाकर्ता संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस याचिका के साथ हस्तगत न्यायालय में प्रस्तुत हुआ है।"

अपनी याचिका में, याचिकाकर्ता ने अपनी हिरासत पर सवाल उठाने के लिए कई आधार उठाए हैं, उनमें से एक पुलिस निरीक्षक श्री आरसी वर्मा की जांच रिपोर्ट प्रस्तुत न करना है, जिन्होंने खजान सिंह कि 3 मार्च, 1988 को हुई घटना के बारे में एचसी 1057 की रिपोर्ट की सच्चाई और शुद्धता की पुष्टि की थी। हालाँकि, रिट याचिका की सुनवाई के दौरान आपत्ति के इस आधार के संबंध में कोई दलील नहीं दी गई।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री जैन ने निम्नलिखित आधारों पर हिरासत के आदेश की आलोचना की:

(1) हिरासत के आधार में निर्धारित सभी तीन आधार, भले ही सही हों, ऐसी घटनाएं नहीं हैं जो सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव को प्रभावित करेंगी और अधिक से अधिक उन्हें केवल व्यक्तियों के खिलाफ किए गए अपराध या ऐसी घटनाओं के रूप में माना जा सकता है जिनके कानून व्यवस्था की स्थिति प्रभावित होने की संभावना है।

(2) तीसरा आधार एक मनगढ़ंत घटना है ताकि हिरासत आदेश को विश्वसनीयता प्रदान की जा सके, जिससे यह प्रतीत हो कि याचिकाकर्ता असामाजिक कृत्यों में लिप्त था, जिससे सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव पर असर पड़ा।

(3) 2 अगस्त 1988 को जब याचिकाकर्ता सलाहकार बोर्ड के समक्ष उपस्थित हुआ तो उसे एक मित्र की सहायता लेने के अवसर से वंचित कर

दिया गया।

इन तर्कों के अलावा श्री जैन ने एक चौथा तर्क भी उठाया कि अधिनियम की धारा 3(5) के तहत राज्य सरकार को, अधिनियम के तहत हिरासत में लिए गए किसी भी बंदी तथा हिरासत के आधारों की रिपोर्ट सात दिनों के भीतर केंद्र सरकार को भेजने का, आदेश दिया गया है और ऐसी रिपोर्ट प्राप्त होने पर केंद्र सरकार मामले पर विचार करने और अधिनियम की धारा 14 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए या तो हिरासत को मंजूरी देने या इसे रद्द करने के लिए बाध्य है। हस्तगत मामले में एेसा कोई तथ्य प्रकट नहीं हुआ है कि केंद्र सरकार ने अधिनियम के तहत अपना कर्तव्य निभाया था।

चूंकि यह विवाद याचिका में नहीं उठाया गया था और चूंकि केंद्र सरकार को एक पक्ष प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं किया गया था, इसलिए याचिकाकर्ता के वकील ने एक याचिका दायर की और एक अतिरिक्त आधार उठाने और केंद्र सरकार को एक पक्ष प्रतिवादी के रूप में शामिल करने के लिए अदालत से अनुमति मांगी। इन प्रार्थनाओं को स्वीकार कर लिया गया और केंद्र सरकार को नोटिस जारी किए जाने पर, केंद्र सरकार ने वकील के माध्यम से अपना प्रतिनिधित्व किया।

अपनी याचिका में याचिकाकर्ता की दलीलों को उत्तरदाताओं ने अपने प्रतिशपथ पत्र में खारिज कर दिया है, एक प्रतिवादी, जिला मजिस्ट्रेट, मेरठ

द्वारा और दूसरा श्री पीएन त्रिपाठी, अपर डिवीजन सहायक, गोपनीय अनुभाग -8 यूपी (सिविल) द्वारा सचिवालय, लखनऊ प्रथम प्रतिवादी, उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से दायर किया गया है।

अब हम याचिकाकर्ता की दलीलों के गुण-दोष की पृथक-पृथक से जांच करेंगे। पहला तर्क यह है कि हिरासत के आधार में उल्लिखित तीन आधारों को किसी भी तरह से ऐसे कृत्य के रूप में नहीं माना जा सकता है जो सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव या समुदाय के जीवन की गति को प्रभावित करेगा । याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री जैन ने गुलाब मेहरा बनाम यूपी राज्य, [1987] IV एससीसी 302 का हवाला दिया और आग्रह किया कि उस मामले में हिरासत का पहला आधार भी खलासी के दुकानदारों को गोली मारने की धमकी देने वाले बंदी से संबंधित है। लाइन इलाके में अगर वे उसे पैसे देने में विफल रहे तो दुकानदार आतंकित हो गए और अपनी दुकानें बंद कर दीं। इस न्यायालय ने आधार को केवल कानून और व्यवस्था को प्रभावित करने वाला माना था, न कि सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव को प्रभावित करने वाला। श्री जैन ने तर्क दिया कि आधार 1 और 2 व्यक्तिगत व्यक्तियों को दी गई धमकियाँ हैं जिनके संबंध में आपराधिक मामले दर्ज किए गए हैं और तीसरा आधार गुलाब मेहरा के मामले में इस न्यायालय द्वारा देखे गए आधार के समान था। नतीजतन, यह तर्क दिया गया कि हमें भी मानना चाहिए, जैसा कि गुलाब

मेहरा के मामले में किया गया था, कि याचिकाकर्ता के खिलाफ निर्धारित आधार केवल कानून और व्यवस्था की स्थिति को प्रभावित करेंगे और सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव के लिए खतरा पैदा नहीं करेंगे। हमने इस मामले पर गहनता से विचार किया है लेकिन हम श्री जैन के तर्क से सहमत होने में खुद को असमर्थ पाते हैं। चरण संख्या 1 में, याचिकाकर्ता अपने सहयोगियों के साथ गया था और आम के बाग के ठेकेदार यूसुफ को धमकी दी थी कि उसे गुंडागर्दी (चौथ) की फीस का भुगतान किया जाना चाहिए और याचिकाकर्ता और उसके सहयोगियों ने यूसुफ के साथ "मार डालो साला को" कहते हुए मारपीट की। यूसुफ द्वारा पुलिस को मामले की सूचना देने पर याचिकाकर्ता और उसके सहयोगियों के खिलाफ आईपीसी की धारा 307 और 323 के तहत मामला दर्ज किया गया था। ठेकेदार से चौथ की मांग और उस पर किए गए हमले से पता चलता है कि यह चौथ के भुगतान के लिए किसी विशेष ठेकेदार को अलग करने का मामला नहीं था, बल्कि इलाके में आम के बागों के सभी मालिकों या ठेकेदारों द्वारा की जाने वाली मांग का पालन किया जाना अपेक्षित था। ऐसी परिस्थितियों में की गई मांग और शुरू किए गए हमले से निस्संदेह उस क्षेत्र के सभी आम के पेड़ों के मालिकों और ठेकेदारों के मन में भय और घबराहट पैदा होगी और इससे समुदाय के जीवन की गति भी प्रभावित होगी। इसी तरह, दूसरा आधार याचिकाकर्ता द्वारा अशोक कुमार नामक व्यक्ति की दुकान पर जाकर 10,000 रुपये की मांग करने और उसे धमकी दी कि अगर अगले दिन या

उसके अगले दिन पैसे नहीं दिए तो दुकानदार को मार दिया जाएगा से संबंधित है। दुकानदान ने मामले की सूचना पूलिस अधिकारियों को दी थी और याचिकाकर्ता के खिलाफ आईपीसी की धारा 506 के तहत मामला दर्ज किया गया है। इस घटना को भी उसी तरह से देखा जाना चाहिए जिस तरह से पहली घटना को समझा गया है। ऐसा नहीं है कि यह मांग और उसके बाद दी गई धमकी अशोक कुमार के खिलाफ अनर्गल तरीके से की गई थी। दूसरी ओर, यह मांग सभी दुकानदारों से इस धमकी के तहत धन उगाही करने की योजना के तहत की गई थी कि यदि चौथ का भुगतान नहीं किया गया तो उनका व्यवसाय जारी रखना और यहां तक कि उनकी जान भी खतरे में पड़ जाएगी। अशोक कुमार पर की गई मांग ने निश्चित रूप से उस इलाके के सभी दुकानदारों को भयभीत कर दिया होगा कि उन्हें भी याचिकाकर्ता को भुगतान करने के लिए मजबूर किया जाएगा और अन्यथा उन्हें अपनी दुकानें चलाने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

जहां तक तीसरी घटना का सवाल है, यह देखा गया है कि याचिकाकर्ता अपने साथ एक रिवॉल्वर लेकर गया था और सरधना के बाजार में सभी दुकानदारों को धमकी दी थी कि अगर कोई भी "चौथ" नहीं देगा तो उसे दुकान खोलने की अनुमति नहीं दी जाएगी तथा उसकी दुकान और उसे परिणाम भुगतना होगा। इस धमकी के कारण दुकान मालिकों ने अपनी दुकानों के शटर गिरा दिए और उसी समय एचसी खजान सिंह बाजार में पहुंच गए। जो कुछ हो रहा था उसे देखकर एचसी खजान सिंह

ने याचिकाकर्ता को पकड़ने का प्रयास किया लेकिन वह अपनी रिवॉल्वर से हवा में कई गोलियां चलाने के बाद अपनी मोटर साइकिल पर भागने में सफल रहा। एचसी खजान सिंह तुरंत थाने लौटे और इस घटना के बारे में जनरल डायरी में एक प्रविष्टि की। इस घटना को केवल कानून और व्यवस्था की स्थिति में गड़बड़ी पैदा करने वाली घटना के रूप में नहीं माना जा सकता है, बल्कि इसे बाजार में स्थिरता को प्रभावित करने वाली घटना के रूप में देखा जाना चाहिए। दुकानदारों ने अपनी दुकानें बंद कर दी थीं और जब उन्होंने याचिकाकर्ता को रिवॉल्वर के साथ घूमते और दुकानदारों से 'चौथ' भुगतान की मांग करते देखा होगा, तो बाजार क्षेत्र में जनता के साथ-साथ वे भी भयभीत हो गए होंगे। क्या कोई कार्य कानून और व्यवस्था का उल्लंघन होगा या सार्वजनिक व्यवस्था का उल्लंघन होगा, इस पर इस न्यायालय ने कई निर्णयों में विचार किया है और हम उनमें से केवल कुछ का ही उल्लेख कर सकते हैं। डाॅ. राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य, [1966] 1 एससीआर 709; अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 3 एससीआर 288; नागेन्द्र नाथ मोंडलाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1972] 1 एससीसी 498 और नंदलाल राॅय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1972] 2 एससीसी 524। गुलाब मेहरा के मामले (सुप्रा) में इन सभी निर्णयों को देखने के बाद, यह निर्धारित किया गया था:

> "इस प्रकार इन टिप्पणियों से यह स्पष्ट है कि कोई कृत्य चाहे कानून और व्यवस्था का उल्लंघन हो या

सार्वजनिक व्यवस्था का उल्लंघन हो, यह पूरी तरह से इसकी सीमा और समाज तक पहुंच पर निर्भर करता है। यदि कार्य विशेष व्यक्तियों या समूह तक सीमित है, व्यक्तियों के लिए यह कानून और व्यवस्था की समस्या का उल्लंघन है, लेकिन यदि अधिनियम का प्रभाव और पहुंच और क्षमता इतनी गहरी है कि बड़े पैमाने पर समुदाय और/या समुदाय की समान गति को प्रभावित कर सकती है तो यह सार्वजनिक व्यवस्था का उल्लंघन बन जाता है।"

यूपी राज्य बनाम हरि शंकर तिवारी, [1987] 2 एससीसी 490 में एसके केदार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1972] 3 एससीसी 816 और अशोक कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन, [1982] 2 एससीसी 403 का जिक्र करते हुए यह अभिमत जाहिर किया गया था कि:

"वैचारिक रूप से कानून और व्यवस्था और सार्वजनिक व्यवस्था के बीच अंतर है, लेकिन किसी भी स्थिति में कानून और व्यवस्था के अंतर्गत आने वाला मामला वास्तव में सार्वजनिक व्यवस्था का मामला हो सकता है। यह सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक मामले के तथ्यों की ओर रुख करना होगा कि क्या मामला बड़े दायरे से संबंधित है या छोटे दायरे से। इस प्रकार कोई अधिनियम कानून और व्यवस्था से

संबंधित है या सार्वजनिक व्यवस्था से, यह समुदाय के जीवन पर उस अधिनियम के प्रभाव या दूसरे शब्दों में पहुंच, प्रभाव और क्षमता पर निर्भर करता है। यदि अधिनियम की वास्तविकता ऐसी है कि यह समुदाय के जीवन की सम गति को बाधित या अव्यवस्थित करता है, तो यह एक ऐसा कृत्य होगा जो सार्वजनिक व्यवस्था को प्रभावित करेगा।"

.....

इस परिप्रेक्ष्य में देखने पर यह नहीं कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता द्वारा ठेकेदारों और दुकानदारों से की गई मांगें और दी गई धमकियां, जैसा कि आधार में उल्लिखित है, इसकी पहुंच केवल कानून व्यवस्था की स्थिति को प्रभावित करने की सीमित सीमा तक ही होगी तथा सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव को प्रभावित करने की हद तक नहीं जाएगी। इसलिए, हम याचिकाकर्ता की ओर से आग्रह किए गए पहले विवाद को कायम रखने में असमर्थ हैं।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि अंतिम उल्लिखित आधार पर कोई विश्वास नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि उन दुकानदारों के नाम, जिन्होंने याचिकाकर्ता के डर से अपनी दुकानें बंद कर दी थीं, या घटना के गवाहों के नाम निर्धारित नहीं किए गए हैं।

आगे यह भी तर्क दिया गया कि हिरासत आदेश को विश्वसनीयता का

रंग देने के लिए तीसरी घटना मनगढ़ंत बनाई गई है। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ हिरासत के आदेश पारित करने के लिए इंस्पेक्टर आरसी वर्मा द्वारा बनाई गई रिपोर्ट में कई उदाहरण दिए गए थे, लेकिन इसके बावजूद पुलिस अधिकारियों ने सामग्री की पर्याप्तता के बारे में संदेह महसूस किया और इसलिए चरण संख्या के रूप में दी गई तीसरी घटना मनगढ़ंत है। 3. हमें इस विवाद में कोई आैचित्य नहीं दिखता क्योंकि रिकॉर्ड बताते हैं कि एचसी खजान सिंह ने तुरंत पुलिस स्टेशन में घटना की रिपोर्ट की थी और उनकी रिपोर्ट की सच्चाई इंस्पेक्टर आरसी वर्मा द्वारा सत्यापित की गई थी। इसलिए इस तर्क को स्वीकार करना संभव नहीं है कि हिरासत के आधार में उल्लिखित तीसरी घटना एक मनगढ़ंत मामला है।

गुलाब मेहरा के मामले में, जिस पर श्री जैन ने भरोसा जताया था, हमने यह पाया है कि उसमें तथ्य काफी अलग थे। उस मामले में हिरासत का पहला आधार बंदी द्वारा खलासी लाइन के दुकानदारों से पैसे मांगने से संबंधित था, लेकिन कोई भी दुकानदार बंदी के खिलाफ शिकायत करने के लिए आगे नहीं आया था और केवल थाने में नियुक्त पिकेट कर्मचारी ने ही रिपोर्ट की थी। दूसरा आधार हिरासत में लिए गए व्यक्ति द्वारा पुलिस दल पर उस समय हमला करने से संबंधित है जब उसने उसकी गिरफ्तारी को प्रभावित करने की कोशिश की थी। उन परिस्थितियों में, इस न्यायालय ने हिरासत के आदेश को रद्द करना उचित समझा था। हस्तगत मामले में,

यह देखा जा सकता है कि यूसुफ और अशोक कुमार द्वारा आधार 1 और 2 बनाने वाली घटनाओं के बारे में विशिष्ट रिपोर्ट दी गई थी और याचिकाकर्ता के खिलाफ मामले दर्ज किए गए थे। जहां तक तीसरे आधार का सवाल है, एचसी खजान सिंह स्वयं, याचिकाकर्ता द्वारा हाथ में रिवॉल्वर लेकर दुकानदारों को दी गई धमकियों और बंदी द्वारा वहां से निकलते समय रिवॉल्वर से की गई फायरिंग के, गवाह थे। एचसी खजान सिंह की रिपोर्ट को इंस्पेक्टर आरसी वर्मा ने सत्यापित किया और सत्य पाया। इस प्रकार यह देखा गया है कि दोनों मामलों के तथ्यों में कोई भी समानता नहीं है। दूसरी ओर, यूपी राज्य बनाम करनाल किशोर सैनी, एआईआर 1988 एससी 208 213 का अवलोकन इस मामले में प्रासंगिक होगा। उस मामले में यह माना गया था कि यदि दिन के समय सार्वजनिक सड़क पर गोलीबारी की जाती है, तो निस्संदेह उक्त घटना सार्वजनिक व्यवस्था को प्रभावित करेगी क्योंकि इसकी पहुंच और प्रभाव सार्वजनिक शांति को परेशान करेगी और यह संबंधित इलाके में लोगों के जीवन की सम गति को प्रभावित करेगी। इसलिए गुलाब मेहरा के मामले (सुप्रा) में निर्णय से याचिकाकर्ता को कोई फायदा नहीं होता है।

जहां तक तीसरे तर्क का संबंध है, यह आग्रह किया गया था कि सलाहकार बोर्ड द्वारा सुनवाई के समय याचिकाकर्ता ने विशेष रूप से एक मित्र की सहायता मांगी थी, लेकिन उसे ऐसी सहायता के अवसर से वंचित कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने अपनी याचिका में इस प्रकार कहा है:

"याचिकाकर्ता ने मौखिक रूप से और साथ ही लिखित रूप में सलाहकार बोर्ड के अध्यक्ष से अनुरोध किया कि उन्हें सलाहकार बोर्ड के समक्ष उनका प्रतिनिधित्व करने के लिए एक वकील या कम से कम एक व्यक्ति जो कानून से परिचित हो, नियुक्त करने की अनुमति दी जाए, क्योंकि याचिकाकर्ता अनपढ़ था और सलाहकार बोर्ड के समक्ष अपने मामले का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम नहीं था। दुर्भाग्य से, सलाहकार बोर्ड ने याचिकाकर्ता के अनुरोध को खारिज कर दिया और उसे कानूनी सलाहकार या कम से कम एक ऐसे व्यक्ति, जो राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के प्रावधानों से परिचित हो, को नियुक्त करने की अनुमति नहीं दी तथा याचिकाकर्ता को किसी बचाव सहायक के बिना ही सलाहकार बोर्ड के समक्ष उपस्थित होने के लिए मजबूर किया। सलाहकार बोर्ड के सदस्यों के कृत्य का यह हिस्सा अवैध, असंवैधानिक और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 19, 21 और 22 का उल्लंघन है।"

जिलाधिकारी के प्रतिशपथ पत्र में इस आरोप का खंडन इस प्रकार किया गया है-

"पैरा संख्या 2 में दिए गए दावे गलत हैं और अस्वीकार किए गए हैं। याचिकाकर्ता को दिनांक 05.07.1988 को जिला जेल, मेरठ में हिरासत

में लिया गया था और उसकी हिरासत पूरी तरह से कानूनी और संवैधानिक है। यह कहना गलत है कि याचिकाकर्ता को सलाहकार बोर्ड के द्वारा अपना बचान करने के लिए अवसर प्रदान नहीं किया गया था। इसके विपरीत, दिनांक 02.08.1989 को सलाहकार बोर्ड द्वारा उसकी बात सुनी गई और हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी को उसके मामले का प्रतिनिधित्व ऐसे व्यक्ति, जो अधिवक्ता नहीं है, के द्वारा किए जाने पर कोई आपत्ति जाहिर नहीं थी। यदि असल में सलाहकार बोर्ड द्वारा उसके अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया हो तो यह तथ्य हिरासत में लेने के प्राधिकारी के संज्ञान में नहीं है। यूपी सरकार, लखनऊ के गृह विभाग के टेली. दिनांक 26.07.1988 के अनुसार, याचिकाकर्ता को गैर-अधिवक्ता अगले मित्र के माध्यम से सलाहकार बोर्ड के समक्ष उपस्थित होने की अनुमति दी गई थी। उक्त संदेश की एक प्रति इसके साथ संलग्न है और इसे अनुलग्नक **R-I** के रूप में चिह्नित किया गया है।

> "हालाँकि, याचिकाकर्ता का यह दावा कि वह अनपढ़ है, गलत है क्योंकि वह अंग्रेजी जानता है और उसने विस्तृत अभ्यावेदन प्रस्तुत किया है। मिली जानकारी के मुताबिक याचिकाकर्ता इंटरमीडिएट है। एके रॉयल बनाम यूओआई, (एआईआर 1982 एससी 709 में रिपोर्ट किया गया) में निर्णय के अनुपात का मौजूदा मामले में किसी भी तरह से उल्लंघन नहीं किया गया है।"

उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से प्रतिशपथ पत्र में इसे इस प्रकार कहा गया है:

"लेकिन रिकॉर्ड से यह स्पष्ट है कि सलाहकार बोर्ड ने 2 जुलाई, 1988 को अपने पत्र के माध्यम से राज्य सरकार को निर्देश दिया था कि चूंकि याचिकाकर्ता श्री शरद त्यागी ने अपने अगले मित्र के साथ उपस्थित होने का अनुरोध किया था, इसलिए उन्हें उपस्थित होने के लिए सूचित किया जा सकता है। सुनवाई की तारीख पर अपने अगले मित्र (गैर-अधिवक्ता) के साथ बोर्ड की बैठक। राज्य सरकार ने सलाहकार बोर्ड के निर्देशों का अनुपालन किया और 26 जुलाई को अपने रेडियोग्राम संदेश के माध्यम से जिला अधिकारियों को आवश्यक निर्देश भेजे थे। 1988, जिसकी एक प्रति इसके साथ संलग्न है और अनुलग्नक आरआई के रूप में चिह्नित है।

प्रति शपथ पत्र में दिए गए विशिष्ट कथन के अलावा- यूपी राज्य के विद्वान अधिवक्ता डेविट श्री योगेश्वर दयाल ने हमारा ध्यान सरकार द्वारा जिला मजिस्ट्रेट को भेजे गए रेडियोग्राम की ओर भी आकर्षित किया है, जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "हिरासत में लिए गए व्यक्ति के अनुरोध पर उसका अगला मित्र (गैर-अधिवक्ता) भी हो सकता है, जिसे उसके साथ उपस्थित होने की अनुमति दी जाए।" श्री योगेश्वर दयाल ने हमें याचिकाकर्ता की हिरासत से संबंधित मूल रिकॉर्ड वाली फ़ाइल भी उपलब्ध

कराई। रिकॉर्ड से हमें पता चला कि याचिकाकर्ता को मेरठ जिला जेल के अधीक्षक के माध्यम से रेडियोग्राम भेजा गया था। याचिकाकर्ता ने उसमें अंग्रेजी में अपने हस्ताक्षर किए हैं और "तारीख" शब्द भी लिखा है, लेकिन उसने तारीख नहीं भरी है। (प्रतिशपथ पत्र में कहा गया है कि याचिकाकर्ता अनपढ़ नहीं है बल्कि उसने इंटरमीडिएट तक पढ़ाई की है)। इससे याचिकाकर्ता की पत्नी श्रीमती शोभा त्यागी द्वारा दायर प्रत्युत्तर हलफनामे में कहा गया कथन गलत साबित होगा "कि प्रतिवादी नंबर 2 के जवाबी हलफनामे के साथ संलग्न टेलीग्राम की प्रति बंदी को नहीं दी गई थी, बंदी को कभी सूचित नहीं किया गया था कि वह एक ऐसे मित्र द्वारा प्रतिनिधित्व करने का हकदार है जो अधिवक्ता नहीं है।" श्री जैन का तर्क यह था कि यदि याचिकाकर्ता को रेडियोग्राम दिखाया भी गया था, तो यह देरी से किया गया होगा और याचिकाकर्ता के पास किसी से अनुबंध करने और अपने साथ किसी गैर-अधिवक्ता मित्र को सलाहकार बोर्ड की बैठक में उपस्थित होने की व्यवस्था करने का समय नहीं होगा। हम कई कारकों के कारण इस तर्क का सामना करने में असमर्थ हैं। सबसे पहले, याचिकाकर्ता ने अपनी याचिका में ऐसी कोई दलील नहीं उठाई है। उनका विशिष्ट तर्क यह था कि उन्होंने सलाहकार बोर्ड के अध्यक्ष से लिखित और मौखिक रूप से अनुरोध किया था कि उन्हें सलाहकार बोर्ड के समक्ष अपने मामले का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक वकील या कानून से परिचित व्यक्ति की सेवाएं लेने की अनुमति दी जाए, लेकिन सलाहकार बोर्ड ने उसके अनुरोध

को अस्वीकार कर दिया। इसलिए यह उनका मामला नहीं था कि उन्हें रेडियोग्राम देर से दिखाया गया था और उनके पास सलाहकार बोर्ड के सामने अपने साथ आने के लिए किसी की व्यवस्था करने का समय नहीं था। एक अन्य परिस्थिति जो श्री जैन के तर्क को कमजोर करती है, वह यह है कि यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि याचिकाकर्ता ने सलाहकार बोर्ड के अध्यक्ष को मौखिक रूप से प्रतिनिधित्व किया था कि वह एक मित्र की सेवाएं चाहता था और उसे रेडियोग्राम बहुत देर से दिखाया गया था। उत्तरदाताओं ने यह पुष्टि करने के लिए उच्च न्यायालय के अतिरिक्त रजिस्ट्रार द्वारा भेजे गए पत्र की एक प्रति दायर की है कि सलाहकार बोर्ड ने याचिकाकर्ता को एक गैर-अधिवक्ता मित्र के साथ बोर्ड के समक्ष उपस्थित होने की अनुमति दी थी, लेकिन इसके बावजूद कोई भी उपस्थित नहीं हुआ। सुनवाई की तारीख पर याचिकाकर्ता के साथ, और इसलिए याचिकाकर्ता की ओर से किसी मित्र की गैर-उपस्थिति के बारे में सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट में कोई उल्लेख नहीं किया गया था। ***श्री एके रॉय बनाम भारत संघ, [1982] 1 एससीसी 271*** यह लगातार माना गया है कि भले ही एक बंदी कानूनी सहायता पाने का हकदार नहीं होगा, लेकिन उसे अपने समय पर किसी मित्र की सहायता पाने का अधिकार है। मामले पर सलाहकार बोर्ड द्वारा विचार किया गया है और इसलिए किसी मित्र की सहायता के अवसर से इनकार करने से हिरासत ख़राब हो जाएगी। यह सिद्धांत निस्संदेह एक अच्छी तरह से बताया गया है। हालाँकि, यह देखा

गया है कि यद्यपि सलाहकार बोर्ड ने बंदी को एक मित्र के साथ उपस्थित होने की अनुमति दी थी, लेकिन बंदी अपने एक मित्र को अपने साथ ले जाने में विफल रहा था। उन्होंने सलाहकार बोर्ड को यह भी नहीं बताया कि उनके पास किसी मित्र की सेवाएँ प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय नहीं है और उन्हें किसी मित्र की सेवाएँ प्राप्त करने के लिए समय की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति होने पर, वह अपनी गलतियों का फायदा नहीं उठा सकता है और यह तर्क नहीं दे सकता है कि हिरासत का आदेश अवैध है क्योंकि सलाहकार बोर्ड की बैठक में किसी मित्र ने उसका प्रतिनिधित्व नहीं किया था। यह स्थिति स्थापित है और हम केवल ***विजय कुमार बनाम भारत संघ, एआईआर 1988 एससी 934 एट 939*** में इस न्यायालय की टिप्पणी का उल्लेख कर सकते हैं:

> "उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणी से ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता ने अपने गवाहों की जांच के लिए या अपने दोस्त की सहायता के लिए सलाहकार बोर्ड के समक्ष कोई प्रार्थना किए बिना, अपने मामले पर बहस करना शुरू कर दिया, जिसकी पूरी संभावना थी। सलाहकार बोर्ड के सदस्यों को यह आभास दिया गया कि अपीलकर्ता किसी भी गवाह की जांच नहीं करेगा। अपीलकर्ता को सलाहकार बोर्ड के समक्ष एक विशेष प्रार्थना करनी चाहिए थी कि वह उन गवाहों की जांच करेगा, जो बाहर खड़े थे। हालांकि, अपीलकर्ता ने ऐसा

किया सलाहकार बोर्ड से ऐसा कोई अनुरोध न करें। हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी के इस कथन को स्वीकार न करने का कोई कारण नहीं है कि अपीलकर्ता को सुनवाई के समय सलाहकार बोर्ड द्वारा किसी अधिवक्ता या मित्र की सहायता लेने की अनुमति दी गई थी, लेकिन अपीलकर्ता उसने स्वयं इसका लाभ नहीं उठाया। इन परिस्थितियों में, हमें नहीं लगता कि अपीलकर्ता की ओर से दिए गए इस तर्क में कोई दम है कि सलाहकार बोर्ड ने अवैध तरीके से काम किया और जांच न करके प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया। अपीलकर्ता द्वारा सलाहकार बोर्ड की बैठक में पेश किए गए गवाहों और अपीलकर्ता को अपने मित्र की सहायता लेने की अनुमति नहीं देने के मामले में।"

रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्रियों से, हम संतुष्ट हैं कि अपीलकर्ता को एक मित्र की सेवाएं लेने की अनुमति दी गई थी और सरकार द्वारा भेजे गए रेडियोग्राम के बारे में उसे विधिवत सूचित किया गया था, लेकिन किसी कारण से उसने किसी मित्र की सेवाओं का लाभ नहीं उठाया था। उन्होंने सलाहकार बोर्ड को यह बताने का भी विकल्प नहीं चुना कि उन्हें एक मित्र की सेवाएँ प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया गया। परिणामस्वरूप, तीसरा विवाद भी विफल हो जाता है।

हमारे पास केवल चौथा और आखिरी विवाद बचा है। याचिका में इस बात की कोई शिकायत नहीं की गई कि जब राज्य सरकार ने अधिनियम की धारा 3(5) के तहत रिपोर्ट भेजी तो केंद्र सरकार ने याचिकाकर्ता के मामले पर विचार नहीं किया और केंद्र सरकार द्वारा विवेक का प्रयोग न कर याचिकाकर्ता की हिरासत को खारिज कर दिया है। आपत्ति का यह आधार केवल बहस के दौरान उठाया गया था और परिणामस्वरूप केंद्र सरकार को एक पार्टी प्रतिवादी के रूप में शामिल करने की अनुमति दी गई थी। केंद्र सरकार की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता ने कहा है कि केंद्र सरकार ने वास्तव में राज्य सरकार द्वारा भेजी गई रिपोर्ट पर विचार किया था और धारा 14 पर अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए आदेश को रद्द करने का कोई कारण नहीं देखा। इस कथन की सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है।

हमारे सामने एक और तर्क यह दिया गया कि भले ही हिरासत का आदेश 5 अप्रैल, 1988 को पारित किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता को 4 जुलाई, 1988 को अदालत में आत्मसमर्पण करने तक हिरासत में लेने के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया था। यह तर्क है प्रथम दृष्टया यह योग्यता से रहित है क्योंकि जवाबी हलफनामों में यह विशेष रूप से कहा गया है कि याचिकाकर्ता फरार था और इसलिए धारा 82 आैर 83 सीआर के तहत उद्घोषणा की गई थी। पीसी और इसके बाद ही याचिकाकर्ता ने खुद को कोर्ट में सरेंडर कर दिया था। इसलिए यह ऐसा मामला नहीं है

जहां याचिकाकर्ता स्वतंत्र रूप से घूम रहा था लेकिन कोई गिरफ्तारी नहीं हुई क्योंकि उसके बड़े पैमाने पर रहने को सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव के लिए खतरा नहीं माना गया था।

परिणाम में हमें याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित हिरासत के आदेश को रद्द करने का कोई आधार नहीं मिला। तद्नुसार रिट याचिका खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अमन गुप्ता (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।